अपभ्रंश-व्याकरण

सन्धि-समास-कारक

डॉ. कमलचन्द सोगाणी

अपभ्रंश साहित्य अकादमी
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी
राजस्थान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अपभ्रंश-व्याकरण

सन्धि-समास-कारक

डॉ. कमलचन्द सोगाणी
(पूर्व प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र)
सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

अपभ्रंश साहित्य अकादमी
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी
राजस्थान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

◆ **प्रकाशक**

अपभ्रंश साहित्य अकादमी
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी,
श्री महावीरजी - 322 220 (राजस्थान)

◆ **प्राप्ति स्थान**
1. **जैनविद्या संस्थान**, श्री महावीरजी
2. **साहित्य विक्रय केन्द्र**,
दिगम्बर जैन नसियाँ भट्टारकजी,
सवाई रामसिंह रोड, जयपुर - 302 004

◆ प्रथम संस्करण - मार्च 2007

◆ सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

◆ मूल्य : 30/-

◆ **पृष्ठ संयोजन**
श्याम अग्रवाल,
ए-336, मालवीय नगर,
जयपुर

◆ मुद्रक
जयपुर प्रिन्टर्स प्रा. लि.,
एम.आई.रोड, जयपुर - 302 001

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ संख्या
आरम्भिक व प्रकाशकीय	
सन्धि	1 - 7
सन्धि प्रयोग के उदाहरण	8 - 11
समास	12 - 19
समास प्रयोग के उदाहरण	20 - 27
कारक	28 - 53

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आरम्भिक व प्रकाशकीय

'अपभ्रंश व्याकरण' पाठकों के हाथों में समर्पित करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है।

यह सर्वविदित है कि तीर्थंकर महावीर ने जनभाषा "प्राकृत" में उपदेश देकर सामान्यजन के लिए विकास का मार्ग प्रशस्त किया। प्राकृत भाषा ही अपभ्रंश के रूप में विकसित होती हुई प्रादेशिक भाषाओं एवं हिन्दी का स्रोत बनी। अतः हिन्दी एवं अन्य सभी उत्तर भारतीय भाषाओं के विकास के इतिहास के अध्ययन के लिए "अपभ्रंश भाषा" का अध्ययन आवश्यक है।

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित 'जैनविद्या संस्थान' के अन्तर्गत 'अपभ्रंश साहित्य अकादमी' की स्थापना सन् 1988 में की गई। अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर द्वारा मुख्यतः पत्राचार के माध्यम से अपभ्रंश का अध्यापन किया जाता है।

अपभ्रंश भाषा को सीखने-समझने को ध्यान में रखकर 'अपभ्रंश रचना सौरभ' 'अपभ्रंश अभ्यास सौरभ' 'प्रौढ अपभ्रंश रचना सौरभ' 'अपभ्रंश काव्य सौरभ' आदि पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। इसी क्रम में 'अपभ्रंश व्याकरण' पुस्तक तैयार की गई है।

किसी भी भाषा को सीखने-समझने के लिए उसकी व्याकरण व रचना-प्रक्रिया का ज्ञान आवश्यक है। प्रौढ अपभ्रंश रचना सौरभ भाग-1 में विभिन्न प्रकार के अव्यय, विभिन्न प्रकार के विशेषणों, विभिन्न विभक्तियों में वर्तमान कृदन्त के प्रयोगों तथा भूतकालिक कृदन्त के विभिन्न प्रयोगों को समझाया गया है। इनको समझाने के लिए काव्यों से वाक्य प्रयोगों का संकलन किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक 'अपभ्रंश व्याकरण' में सन्धि, समास और कारक उदाहरण सहित समझाये गए हैं। इससे पाठक सहज-सुचारु रूप से अपभ्रंश भाषा में रचना करने का अभ्यास कर सकेंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुस्तक प्रकाशन में प्रदत्त सहयोग के लिए अपभ्रंश साहित्य अकादमी के विद्वानों व प्राकृत भारती अकादमी के विद्वानों के आभारी हैं।

पृष्ठ संयोजन के लिए श्री श्याम अग्रवाल एवं मुद्रण के लिए जयपुर प्रिन्टर्स प्रा. लि. धन्यवादार्ह हैं।

नरेशकुमार सेठी	नरेन्द्र पाटनी	डॉ. कमलचन्द सोगाणी
अध्यक्ष	मंत्री	संयोजक
प्रबन्धकारिणी कमेटी		
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी		जैनविद्या संस्थान समिति

महावीर जयन्ती
चैत्र शुक्ल त्रयोदशी
वीर निर्वाण संवत् 2533
31.03.2007

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समर्पण

डॉ. नेमिचन्द्रजी शास्त्री

एवं

पं. बेचरदास जीवराजजी दोशी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि

दो निकट वर्णों के परस्पर मिल जाने को सन्धि कहते हैं। जब एक शब्द के आगे दूसरा शब्द आता है तो पहले शब्द के अंतिम वर्ण और दूसरे शब्द के प्रथम वर्ण के मिल जाने से जो परिवर्तन होता है, वह परिवर्तन सन्धि कहलाता है। जैसे-

जीव + अजीव = जीवाजीव नर + ईसर = नरेसर

लोग + उत्तमा = लोगुत्तमा नर + इंद = नरिंद।

अपभ्रंश साहित्य में पाई जाने वाली विभिन्न सन्धियाँ निम्न प्रकार हैं :

1) समान स्वर सन्धि : (हेम - 1/5)

(क) अ + अ = आ जैसे - जीव + अजीव = जीवाजीव (जीव और अजीव)

अ + आ = आ जैसे - हिम + आलय = हिमालय (हिमालय पर्वत)

आ + अ = आ जैसे - दया + अणुसरण = दयाणुसरण (दया का अनुसरण)

आ + आ = आ जैसे - विज्जा + आलय = विज्जालय (विद्या का स्थान)

(ख) इ + इ = ई जैसे - सामि + इभ = सामीभ (स्वामी का हाथी)

इ + ई = ई जैसे - गिरि + ईस = गिरीस (हिमालय पर्वत)

ई + इ = ई जैसे - गामणी + इसु = गामणीसु (गाँव के मुखिया का बाण)

ई + ई = ई जैसे - पुहवी + ईस = पुहवीस (पृथ्वी का स्वामी)

(ग) उ + उ = ऊ जैसे - गुरु + उवदेस = गुरूवदेस (गुरु का उपदेश)

उ + ऊ = ऊ जैसे - साहु + ऊआस = साहूआस (साधु का उपवास)

ऊ + उ = ऊ जैसे - चमू + उदय = चमूदय (सेना की उन्नति)

ऊ + ऊ = ऊ जैसे - सयंभू + ऊसाह = सयंभूसाह (स्वयंभू का उत्साह)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

2) असमान स्वर सन्धि : (ए और ओ रूप विधान) [पिशल, पारा 149 (पृ.247)]

(क) अ + इ = ए जैसे – देस + इला = देसेला (देश की भूमि)

आ + इ = ए जैसे – गुहा + इसि = गुहेसि (गुफा का ऋषि)

अ + ई = ए जैसे – दिण + ईस = दिणेस (सूर्य)

आ + ई = ए जैसे – सिक्खा + ईहा = सिक्खेहा (शिक्षा का विचार)

(ख) अ + उ = ओ जैसे – सव्व + उदय = सव्वोदय (सर्वोदय)

आ + उ = ओ जैसे – गंगा + उदय = गंगोदय (गंगा का जल)

अ + ऊ = ओ जैसे – परोप्पर + ऊहापोह = परोप्परोहापोह (आपस में सोच-विचार)

आ + ऊ = ओ जैसे – दया + ऊण = दयोण (दया से हीन)

3) स्वर-सन्धि निषेध : (हेम – 1/6, 7, 9)

(क) इ, ई, उ, ऊ के पश्चात् कोई विजातीय स्वर आवे तो सन्धि नहीं होती है। जैसे–

जाइ + अन्ध = जाइअन्ध (जन्म से अन्धा)

पुढवी + आउ = पुढवीआउ (पृथ्वी की आयु)

बहु + अट्ठि य = बहुअट्ठि य (बहुत हड्डियों वाला)

तणू + अकय = तणूअकय (शरीर से नहीं किया हुआ)

(ख) ए और ओ के बाद स्वर होने पर सन्धि नहीं होती है। जैसे – (हेम – 1/7)

लच्छीए + आणंदो = लच्छीएआणंदो (लक्ष्मी का आनन्द)

महावीरे + आगच्छइ = महावीरेआगच्छइ (महावीर आते हैं)

अहो + अच्छरियं = अहोअच्छरियं (प्रशंसनीय आश्चर्य)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(ग) क्रियापद के प्रत्यय के स्वर की अन्य किसी भी दूसरे स्वर के साथ सन्धि नहीं होती है (हेम - 1/9)

जैसे - होइ + इह = होइ इह (यहाँ होता है)

4) लोप-विधान सन्धि : (हेम - 1/10)

(क) स्वर के बाद स्वर रहने पर पूर्व स्वर का लोप विकल्प से हो जाता है। जैसे-

नर + ईसर = नरीसर अथवा नरेसर (नर का स्वामी)

महा + इसि = महिसि अथवा महेसि (बड़ा इन्द्र)

सासण + उदय = सासणोदय अथवा सासणुदय (शासन का लाभ)

महा + ऊसव = महूसव अथवा महोसव (महा उत्सव)

(ख) ए, ओ से पहले अ, आ का लोप हो जाता है। [पिशल, पारा 153 (पृ. 251)]

जल + ओह = जलोह (जल का भंडार)

णव + एला = णवेला (इलायची का नया पेड़)

वण + ओली = वणोली (वन की श्रेणी)

माला + ओहड = मालोहड (माला फेंकी हुई)

(ग) (i) पूर्व पद के पश्चात् **अ** का लोप दिखाने के लिए एक अवग्रह चिह्न (ऽ) लिखा जाता है, जैसे -

का+ अवत्था = काऽवत्था (क्या अवस्था)

(ii) पूर्वपद के पश्चात् **आ** का लोप दिखाने के लिए दो अवग्रह चिह्न (ऽऽ) भी लिखे जाते हैं, जैसे -

ना + आलसेण = नाऽऽलसेण (आलस्य के बिना)

5) अनुस्वार विधान :

अनुस्वार के पश्चात् कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग और पवर्ग के अक्षर होने से क्रम से अनुस्वार को ङ्, ञ्, ण्, न् और म् विकल्प से होते हैं। (हेम-1/30)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कवर्ग

क - पं + क = पङ्क, पंक (पु.)(कीचड़)

ख - सं + ख = सङ्ख, संख (पु.)(शंख)

ग - अं + गण = अङ्गण, अंगण (नपु.)(आंगण/चौक)

घ - लं + घण = लङ्घण, लंघण (नपु.) (उपवास)

चवर्ग

च - कं + चुअ = कञ्चुअ, कंचुअ (पु.) (साँप की केंचुली)

छ - लं + छण = लञ्छण, लंछण (नपु.) (चिह्न)

ज - अं + जिअ = अञ्जिअ, अंजिअ (नपु.) (अंजनयुक्त)

झ - सं + झा = सञ्झा, संझा (स्त्री.)(सायंकाल)

टवर्ग

ट - कं + टअ = कण्टअ, कंटअ (पु.) (काँटा)

ठ - उ + कंठा = उक्कण्ठा, उक्कंठा (स्त्री.) (प्रबल इच्छा)

ड - कं + ड = कण्ड, कंड (नपु.) (बाण)

ढ - सं + ड = सण्ड, संड (पु.) (बैल)

तवर्ग

त - अं + तर = अन्तर, अंतर (नपु.) (भीतर का)

थ - पं + थ = पन्थ, पंथ (पु.) (मार्ग)

द - चं + द = चन्द, चंद (पु.) (चन्द्रमा)

ध - बं + धव = बन्धव, बंधव (पु.) (बन्धु)

पवर्ग

प - कं + प = कम्प, कंप (पु.) (चलन)

फ - वं + फइ = वम्फइ, वंफइ (चाहता है) (वर्तमान काल)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ब – कलं + ब = कलम्ब, कलंब (पु.) (कदम्ब वृक्ष)

भ – आरं + भ = आरम्भ, आरंभ (पु.) (शुरुआत)

5.1 अनुस्वार आगम : (हेम – 1/26)

(i) प्रथम स्वर पर अनुस्वार का आगम :

असु > अंसु (आँसू)

दसण > दंसण (दाँत से काटना)

(ii) द्वितीय स्वर पर अनुस्वार का आगम :

इह > इहं (यहाँ)

मणसी > मणंसी (प्रसन्न मनवाला)

मणसिणी > मणंसिणी (प्रसन्न मनवाली)

मुहु > मुहुं (बारबार)

अज्ज > अज्जं (आज)

(iii) तृतीय स्वर पर अनुस्वार का आगम :

उवरि > उवरिं (ऊपर)

अइमुत्तय > (अइमुंत्तय) (एक प्रकार की लता)

5.2 अनुस्वार लोप : (हेम – 1/29)

(i) प्रथम स्वर पर अनुस्वार का लोप :

सिंह > सीह (सिंह)

किं > कि (क्या)

(ii) द्वितीय स्वर पर अनुस्वार का लोप :

कहं > कह (कैसे)

ईसिं > ईसि (थोड़ा)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं > एव (इसप्रकार)

दाणिं > दाणि (इस समय)

(iii) तृतीय स्वर पर अनुस्वार का लोप :

इयाणिं > इयाणि (इस समय)

6) अव्यय-सन्धि :

'अव्यय पदों में सन्धिकार्य करने को अव्यय सन्धि कहा गया है। यद्यपि यह सन्धि भी स्वर सन्धि के अन्तर्गत ही है, तो भी विस्तार से विचार करने के लिए इस सन्धि का पृथक् उल्लेख किया गया है।'

(i) किसी भी पद के बाद आये हुए **अपि/अवि** अव्यय के **'अ'** का विकल्प से लोप होता है (हेम - 1/41) जैसे-

केण + अपि/अवि केणपि/केणवि अथवा केणापि/केणावि

किं +अपि/अवि किंपि/किंवि अथवा किमपि/किमवि

(ii) किसी भी पद के बाद में रहने वाले **इति** अव्यय के **'इ'** का लोप हो जाता है। (हेम - 1/42) जैसे -

किं + इति = किंति

जुत्तं + इति = जुत्तंति

(iii) यदि स्वरान्त पद के बाद **'इति'** अव्यय आ जाए तो उपर्युक्त नियम से इ को लोप कर देने पर **ति** का द्वित्व **त्ति** हो जाता है। (हेम - 1/42) जैसे -

तहा + इति = तहात्ति > तहत्ति (संयुक्त अक्षर आगे आने के कारण हा > ह हो जाता है)

पुरिसो + इति = पुरिसोत्ति > पुरिसुत्ति (संयुक्त अक्षर आगे आने के कारण सो > सु हो जाता है)

(iv) सर्वनामों से परे अव्ययों के **आदि स्वर** का विकल्प से लोप हो जाता है, (हेम - 1/40) जैसे -

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अम्मि + एत्थ = अम्मित्थ अथवा अम्मि एत्थ (मैं यहाँ)

तुज्झ + इत्थ = तुज्झत्थ अथवा तुज्झ इत्थ (तुम सब यहाँ)

(v) अव्ययों से परे सर्वनामों के आदि स्वर का विकल्प से लोप हो जाता है। (हेम - 1/40) जैसे -

जइ + अहं = जइहं अथवा जइ अहं (यदि मैं)

जइ + इमा = जइमा अथवा जइ इमा (यदि यह)

7.1 निम्नलिखित विधा के शब्दों के संधि विधान को जानना उपयोगी है। दीर्घ स्वर के आगे यदि संयुक्त अक्षर हो तो उस दीर्घ स्वर का ह्रस्व स्वर हो जाता है। (हेम - 1/84)

निम्नलिखित कुछ उदाहरण दिये जा रहे हैं -

(i) विरह + अग्गि = विरहाग्गि > विरहग्गि (आ > अ) = विरह की अग्नि

मुणि + इंद = मुणींद > मुणिंद (ई > इ) = मुनियों में श्रेष्ठ

चमू + उच्छाह = चमूच्छाह > चमुच्छाह (ऊ > उ) = सेना का उत्साह

(ii) देस + इड्ढि = देसेड्ढि > देसिड्ढि (ए > इ) = देश का वैभव

पुप्फ + उज्जाण = पुप्फोज्जाण > पुप्फुज्जाण (ओ > उ) = फूलों का बगीचा।

7.2 आदि स्वर 'इ' के आगे यदि संयुक्त अक्षर आ जाए तो उस आदि 'इ' का 'ए' विकल्प से होता है। जैसे - सिन्दूर अथवा सेन्दूर। कहीं कहीं पर 'इ' के आगे संयुक्त अक्षर होने पर 'इ' का 'ए' नहीं होता। जैसे - चिन्ता (यहाँ 'इ' का 'ए' नहीं हुआ), इच्छा (यहाँ 'इ' का 'ए' नहीं हुआ)। इनको साहित्य एवं कोश के आधार से जानना चाहिए। (हेम - 1/85)

न + इच्छसि = णेच्छसि > णिच्छसि (ए > इ)। किन्तु प्रयोगों में **'नेच्छसि'** मिलता है। यह अनियमित प्रयोग है।

8) **अपभ्रंश में सन्धि वैकल्पिक है अनिवार्य नहीं।** अक्षर परिवर्तन तथा लोप के नियम का उपयोग करते समय अर्थ भ्रम न हो, इसका ध्यान रखना जरूरी है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि प्रयोग के उदाहरण

(अपभ्रंश काव्य सौरभ)

निम्नलिखित का सन्धि विच्छेद कीजिए और सन्धि का नियम बतलाईये।

पाठ 1 = पउमचरिउ	**पृष्ठ संख्या**
आसाढट्ठमिहिं	= 5
रहसुच्छलिय	= 6
पाणवल्लहिय	= 6
धवलियासु	= 7
पढमाउसु	= 8
धिगत्थु	= 11
जीवाउ	= 12
वियप्पेवि	= 13
चिन्तावण्णु	= 16
अणुवाहणु	= 16
णिसुणेवि	= 17

पाठ 2 = पउमचरिउ	**पृष्ठ संख्या**
उव्वेल्लिज्जइ	= 19
णवेप्पिणु	= 22
बहु-दुक्खाउरु	= 24
विसयासत्तु	= 24
सव्वाहरणहो	= 26
अत्तावणु	= 27
वड्ढिउ	= 27
करेवउ	= 30

पाठ 3 = पउमचरिउ	**पृष्ठ संख्या**
गयणङ्गणे	= 34
पाविट्ठहो	= 35
धम्मिट्ठहो	= 35
वणन्तरे	= 36
धूमावलि	= 37
पवणाकम्पिय	= 40
भयाउरए	= 40

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाठ 4 = पउमचरिउ	पृष्ठ संख्या
जिओऽसि	= 42
एक्कन्तरु	= 43
भमरावलिहि	= 45
जलोल्लिय	= 47
समरङ्गणे	= 50
सरणाइय	= 50
दसासहो	= 53
सउणाहारें	= 53

पाठ 5 = पउमचरिउ	पृष्ठ संख्या
सोक्खुप्पत्ती	= 56
कालान्तरेण	= 58
लवणंकुस	= 61
वणन्तरे	= 61
कुलुग्गयहे	= 63
डहेवि	= 65

पाठ 6 = महापुराण	पृष्ठ संख्या
थियमिह	= 66
णिच्चलंगयं	= 66
जेणेयहु	= 67
तेओहामियचंददिणेसहं	= 67
पणविज्जइ	= 72
डहिवि	= 75
ढोयवि	= 75
जेणेह	= 77

पाठ 7 = महापुराण	पृष्ठ संख्या
कालाणलु	= 79
परमुण्णइ	= 79
तुहुप्परि	= 84
रणंगणि	= 84
बाणावलि	= 89

पाठ 8 = महापुराण	पृष्ठ संख्या
महुरक्खरेहिं	= 93
रामाहिराम	= 94
मेल्लिवि	= 95
हंसावलि	= 96

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाठ 9 = जम्बू-सामिचरिउ	पृष्ठ संख्या
जाणाविउ	= 100
एक्केक्कउ	= 101, 103
निसागमि	= 106

पाठ 10 = सुदंसण-चरिउ	पृष्ठ संख्या
सप्पाइ	= 112
जम्मंतर	= 112
णरयण्णवे	= 113
दिव्वाहरण	= 119
मलयायले	= 125
धम्मोवएसु	= 126

पाठ 11 = सुदंसण-चरिउ	पृष्ठ संख्या
सिविणंतरु	= 130
णिसुणिवि	= 130
जईस	= 136

पाठ 12 = करकंड-चरिउ	पृष्ठ संख्या
खमीसु	= 144

पाठ 13 = धण्णकुमारचरिउ	पृष्ठ संख्या
मारणत्थि	= 147
भयाउर	= 149
विसमावत्थहिं	= 150
पवणाहय	= 153
चरणारविंद	= 158
धाइवि	= 159
जिणायमु	= 162
पयडियसुवाउ	= 162

पाठ 14 = हेमचन्द्र-के दोहे	पृष्ठ संख्या
असुलहमेच्छण	= 167
कुडुल्ली	= 171
जिब्भिन्दिउ	= 172
जेप्पि	= 172
भुञ्जणहं	= 173

पाठ 15 = परमात्म-प्रकाश	पृष्ठ संख्या
परमप्पु	= 175

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमाणंद = 176

जीवाजीव = 181

अणिंदिउ = 182

पाठ 16 = पाहुडदोहा **पृष्ठ संख्या**

अप्पायत्तउ = 183

कम्मायत्तउ = 185

सुमिट्ठाहार = 188

पाठ 17 = सावय-धम्मदोहा **पृष्ठ संख्या**

खेत्तियइं = 194

दोसड = 195

थोवडउ = 196

किज्जइ = 197

मेल्लिवि = 198

जीवियलाहडउ = 198

लहिवि = 199

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समास

"समास का अर्थ है संक्षेप याने थोड़े शब्दों में अधिक अर्थ बताने वाली शैली का नाम समास है। बोलचाल की लोकभाषा में इस शैली का प्रचार बहुत कम दिखाई देता है। परन्तु जब लोकभाषा केवल साहित्य की भाषा बन जाती है तब उसमें भी इसका प्रयोग प्रचुर मात्रा में होता है।"

" 'न्याय का अधीश' कहना हो तो समास विहीन शैली में 'नायसु अधीसु' कहा जाएगा। जब कि समासशैली में 'नायाधीसु' कहा जाएगा अर्थात् जिस अर्थ को बताने के लिए समास विहीन शैली में छः अक्षरों की आवश्यकता पड़ती है उसी अर्थ को बताने के लिए समासशैली में केवल चार अक्षरों से ही काम चल जाता है।"

"इसी प्रकार 'जिस देश में बहुत से वीर हैं वह देश' कहना हो तो समास विहीन शैली में 'जहिं देसे बहु वीरा सन्ति सो देसु' इतना लम्बा वाक्य कहना पड़ता है जब कि उसी अर्थ को बताने के लिए समास शैली में 'बहुवीरु देसु' इतने कम अक्षरों से ही काम चल जाता है अर्थात् जिस अर्थ को बताने के लिए समास विहीन शैली में चौदह अक्षरों की आवश्यकता पड़ती है, उसी अर्थ को संपूर्ण रूप से बताने वाली समास शैली में केवल छः अक्षरों से ही सुन्दर रूपेण काम चल जाता है। समास शैली की यही सब से बड़ी विशेषता है।"

समास के चार भेद निम्नलिखित हैं :

1. दंद (द्वन्द्व)
2. तप्पुरिस (तत्पुरुष)

2.1 कर्मधारय
2.2 द्विगु समास } ये तत्पुरुष समास के भेद हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

3. बहुव्वीहि (बहुव्रीहि),
4. अव्वईभाव (अव्ययीभाव)।

जिन शब्दों का समास किया जाता है उन्हें अलग-अलग कर देने को विग्रह कहते हैं।

1. दंद समास (द्वन्द्व समास)

दो या दो से अधिक संज्ञाएँ एक साथ रखी गई हों तो वह द्वन्द्व समास कहलाता है। जैसे - 'माता-पिता', 'सगा-सम्बन्धी'। ये दोनों उदाहरण द्वन्द्व समास के हैं। उसी प्रकार 'पुण्णपावाइं', 'जीवाजीवा', 'सुहदुक्खाइं', 'सुरासुरा' आदि उदाहरण भी द्वन्द्व समास के हैं। दो या दो से अधिक संज्ञाओं को च (य) शब्द द्वारा जोड़ा गया हो, तो वह भी द्वन्द्व समास कहलाता है, जैसे -

पुण्ण च पाव च पुण्णपावाइं।
जीव य अजीव य जीवाजीव।
सुहु च दुक्खु च सुहदुक्खाइं।
रूवु य सोहग्गु य जोव्वणु य रूवसोहग्गजोव्वणाइं।

द्वन्द्व समास द्वारा बने शब्द अधिकतर बहुवचन में रखे जाते हैं। द्वन्द्व समास के विग्रह में य, अ अथवा च प्रयुक्त होता है।

2. तप्पुरिस समास (तत्पुरुष समास)

जिस समास का पूर्व पद अपनी-विभक्ति के सम्बन्ध से उत्तरपद के साथ मिला हुआ हो, वह तत्पुरुष समास कहलाता है। इस समास का पूर्व पद द्वितीया विभक्ति से लेकर सप्तमी विभक्ति तक होता है। पूर्व पद जिस विभक्ति का हो, उसी नाम से तत्पुरुष समास कहा जायेगा।

बिइआ विभत्ति तप्पुरिस (द्वितीया तत्पुरुष), तइया विभत्ति तप्पुरिस (तृतीया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तत्पुरुष), चउत्थी विभत्ति तप्पुरिस (चतुर्थी तत्पुरुष), पंचमी विभत्ति तप्पुरिस (पंचमी तत्पुरुष), छट्ठी विभत्ति तप्पुरिस (षष्ठी तप्पुरुष) और सत्तमी विभत्ति तप्पुरिस (सप्तमी तत्पुरुष)।

(i) **बिइआ/बीआ विभत्ति तप्पुरिस (द्वितीया तत्पुरुष)** – अतीत, पडिअ, गअ, पत्त और आवण्ण शब्दों के योग में द्वितीया विभक्ति के आने पर द्वितीया-तत्पुरुष समास होता है। जैसे –

इंदिय अतीतो = इंदियातीतो (इंद्रियों से अतीत), अग्गि पडिअ = अग्गिपडिअ (अग्नि में पडा हुआ), सिव गउ = सिवगउ (शिव को प्राप्त), सुह पत्तु = सुहपत्तु (सुख को प्राप्त), पलय गओ = पलयगओ (प्रलय को प्राप्त), दिव गअ = दिवगअ (स्वर्ग को प्राप्त), कट्ठ आवण्णो = कट्ठावण्णो (कष्ट को प्राप्त)।

(ii) **तइआ विभत्ति तप्पुरिस (तृतीया तत्पुरुष)** – जब तत्पुरुष समास का प्रथम शब्द तृतीया विभक्ति में हो, तब उसे तृतीया तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे –

साहूहिं वन्दिउ = साहुवंदिउ (साधुओं द्वारा वंदित), जिणें सरिसु = जिणसरिसु (जिनके समान), दयाए जुत्तु = दयाजुत्तु (दया से युक्त), गुणेहिं संपन्नु = गुणसंपन्नु (गुणों से सम्पन्न), पंकें लित्तु = पंकलित्तु (कीचड़ से लिप्त)।

(iii) **चउत्थी विभत्ति तप्पुरिस (चतुर्थी तत्पुरुष)** – जब तत्पपुरुष समास का प्रथम शब्द चतुर्थी विभक्ति में हो, तब उसे चतुर्थी तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे –

मोक्खहो णाण = मोक्खनाण (मोक्ष के लिए ज्ञान), लोयाहो हिअ = लोयहिअ (लोक के लिए हित), लोगसु सुहु = लोगसुहु (लोग के लिए सुख), बहुजणसु हिअ = बहुजणहिअ (बहुजनों के लिए हित)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(iv) **पंचमी विभत्ति तप्पुरिस (पञ्चमी तत्पुरुष)** – जब तत्पुरुष समास का पहला शब्द पञ्चमी विभक्ति में रहता है, तब उसे पञ्चमी तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे –

संसारहे भीउ = संसारभीउ (संसार से भयभीत), दंसणहे भट्ठ = दंसणभट्ठ (दर्शन से भ्रष्ट), अन्नाणहु भय = अन्नाणभय (अज्ञान से भय), रिणाहे मुत्तु = रिणमुत्तु (ऋण से मुक्त), चोरहु भय = चोरभय (चोर से भय)।

(v) **छट्ठी विभत्ति तप्पुरिस (षष्ठी तत्पुरुष)** – जब तत्पुरुष समास का प्रथम शब्द षष्ठी विभक्ति में रहता है, तब उसे षष्ठी तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे –

देवसु मंदिर = देवमंदिर (देव का मंदिर), विज्जाहे ठाणु = विज्जाठाणु (विद्या का स्थान), धम्मसु पुत्तु = धम्मपुत्तु (धर्म का पुत्र), देवसु थुई = देवथुई (देव की स्तुति), बहूहे मुहु = बहूमुहु (वधू का मुख), समाहि ठाणु = समाहिठाणु (समाधि स्थान)।

(vi) **सत्तमी विभत्ति तप्पुरिस (सप्तमी तत्पुरुष)** – जब तत्पुरुष समास का प्रथम शब्द सप्तमी विभक्ति में रहता है, तब उसे सप्तमी तत्पुरुष समास कहते हैं। जैसे –

कलाहिं कुसलु = कलाकुसलु (कलाओं में कुशल), गिहि जाउ = गिहजाउ (घर में उत्पन्न), नरेहिं सेट्ठ = नरसेट्ठ (नरों में श्रेष्ठ), कम्मे कुसलु = कम्मकुसलु (कर्म में कुशल), सभाहिं पंडिअ = सभापंडिअ (सभा में पण्डित)।

2.1 कम्मधारय समास (कर्मधारय समास) – विशेषण और विशेष्य का समास भी तत्पुरुष के भीतर समझा गया है, उसका दूसरा नाम है – कर्मधारय समास। जैसे –

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्त सो घड = रत्तघडो (लाल घड़ा), वीरु सो जिणु = वीरजिणो (वीरजिन), सुद्ध सो पक्खु = सुद्धपक्खो (शुद्ध पक्ष), पीअ तं वत्थ = पीअवत्थ (पीला वस्त्र), सुंदरा सा पडिमा = सुंदरपडिमा (सुन्दर प्रतिमा)।

कभी समास में दोनों शब्द विशेषण भी होते हैं। जैसे - रत्तपीअ वत्थ (लाल-पीला वस्त्र), सीउण्ह जल (शीत और ऊष्ण जल)।

कई बार पूर्व पद उपमा सूचक होता है। जैसे - चंदु इव मुहु = चन्दमुहु (चन्द्रमा के समान मुख)। वज्ज इव देह = वज्जदेह (वज्र के समान शरीर)।

कई बार पूर्व पद केवल निश्चयबोधक होता है। संजम एव धणु = संजमधणु (संयम ही धन है।), तव चिअ धणु = तवधणु (तप ही धन है।)

2.2 दिगु समास (द्विगु समास) - कर्मधारय समास का प्रथम शब्द यदि संख्या सूचक हो और दूसरा शब्द संज्ञा हो तब उसे द्विगु समास कहते हैं।

(i) समूह अर्थ में द्विगु समास सदा नपुंसकलिंग एकवचन में होता है।

जैसे - नवण्हं तत्ताहं समूह = नवतत्त (नव तत्त्व), चउण्हं कसाहं समूह = चउक्कसाय (चार कषाय), तिण्हं लोगाहं समूह = तिलोग (तीन लोक)।

(ii) कभी-कभी समूह अर्थ में द्विगु समास पुल्लिंग एकवचन भी हो जाता है।

जैसे - तिण्हं वियप्पाहं समूहु = तिवियप्पु (तीन विकल्प)।

(iii) अनेक अर्थ में जो द्विगु समास होता है, उसमें वचन और लिंग का उपर्युक्त प्रकार से नियम नहीं होता है।

जैसे - तिण्णि लोया = तिलोया, चउरो दिसाओ = चउदिसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

3. बहुव्वीहि समास (बहुब्रीहि समास)

जब समास में आये हुए दो या अधिक शब्द किसी अन्य शब्द के विशेषण बन जाते हैं तो उसे बहुब्रीहि समास कहा जाता है। इस समास में प्रयुक्त शब्द प्रधान नहीं होते हैं, परन्तु उनसे पृथक् अन्य कोई शब्द ही प्रधान होता है, इसलिए इस समास को 'अन्य पदार्थ प्रधान समास'[1] भी कहते हैं।

इस समास के दो भेद हैं :

(i) समान विभक्ति वाले शब्द (प्रथमान्त शब्द) - इसे समानाधिकरण बहुब्रीहि समास भी कहते हैं।

(ii) भिन्न विभक्ति वाले शब्द (एक शब्द प्रथमान्त और दूसरा षष्ठी या सप्तमी में हो)। इसे व्यधिकरण बहुब्रीहि समास भी कहते हैं।

इस समास का विग्रह करते समय 'ज', 'जा' की विभिन्न विभक्तियों का प्रयोग किया जाता है (द्वितीया से सप्तमी तक) किन्तु समास में आये हुए शब्द प्रथमान्त ही होते हैं।

(i) **समान विभक्तिवाले शब्दों (प्रथमान्त शब्दों) के उदाहरण** -

क. आरुढु वाणरु ज (2/1) सो = आरुढवाणरु (रुक्खु) (जिस पर बन्दर चढ़ा हुआ है वह)

ख. जिअइं इंदियइं जेण (3/1) सो = जिअइंदिय > जिइंदिय (मुणी)। (जिसके द्वारा इन्द्रियाँ जीत ली गई हैं, वह)

ग. जिअ कामु जेण (3/1) सो = जिअकामु (महादेवु) (जिसके द्वारा काम जीत लिया गया है, वह)

घ. चत्तारि मुहाइं जसु (6/1) सो = चउमुह (बंभ) (जिसके चार मुख हैं, वह)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

च. एग दंतु जसु (6/1) सो = एगदंतु (गणेसु) (जिसके एक दाँत है, वह)

छ. सुत्ता सीहा जाहिं (7/1) सा = सुत्तासीहा (गुहा) (जिसमें सिंह सोया हुआ है, वह)

(ii) भिन्न विभक्ति वाले शब्दों (एक शब्द प्रथमान्त और दूसरा षष्ठी या सप्तमी में हो) के उदाहरण-

क. चक्क पाणिहि जसु सो > चक्कपाणी (विष्णु) (जिसके हाथ में चक्र है, वह)

ख. चक्क हत्थे जसु सो = चक्कहत्थ (भरह) (जिसके हाथ में चक्र है, वह)

ग. गंडीव करि जसु सो = गंडीवकर (अज्जुण) (जिसके हाथ में गांडीव (धनुष) है, वह)

4. अव्वईभाव समास (अव्ययीभाव समास)

अव्ययीभाव समास में पहला पद बहुधा कोई अव्यय होता है और दूसरा पद संज्ञा होता है। पहला पद ही मुख्य होता है। अव्ययीभाव समास का पूरा पद क्रियाविशेषण अव्यय होता है। समास में आए हुए अन्तिम शब्द के रूप सदैव नपुंसकलिङ्ग प्रथमा विभक्ति, एक वचन में चलाए जाते हैं। वैसा ही रूप अव्ययीभाव समास का हो जाता है। अव्ययीभाव समास के रूप नहीं चलते हैं। उदाहरण –

(i) उवगुरु = गुरु समीव (गुरु के समीप)

(ii) अणुभोयण = भोयणसु पच्छा (भोजन के पश्चात्)

(iii) पइनयर = नयर नयर त्ति (प्रतिनगर)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(iv) पइदिण = दिण दिण त्ति (प्रतिदिन)

(v) पइघर = घरे घरे त्ति (प्रतिघर)

(vi) जहासत्ति = सत्ति अणइक्कमिउ (शक्ति की अवहेलना न करके) = (शक्ति के अनुसार)

(vii) जहाविहि = विहि अणइक्कमिवि (विधि की अवहेलना न करके) = (विधि के अनुसार)

(viii) जहारिह = जुग्गय अणइक्कमवि (योग्यता की अवहेलना न करके) = (योग्यता के अनुसार)

समास में **अधिकतर** प्रथम शब्द का अंतिम स्वर ह्रस्व हो तो दीर्घ हो जाता है और दीर्घ हो तो ह्रस्व हो जाता है। इसका कोई निश्चित नियम नहीं है।

ह्रस्व स्वर का दीर्घ :

अन्त + वेई = अन्तावेई (गंगा-यमुना के बीच का भूभाग) अथवा अन्तवेई

सत्त + वीस = सत्तावीस (सत्ताईस) अथवा सत्तवीसा

पइ + हर = पईहर (पति का घर) अथवा पइहर

वेणु + वण = वेणूवण (बाँस का जंगल) अथवा वेणुवण

दीर्घ स्वर का ह्रस्व :

जउणा + यड = जउणयड (यमुनातट) अथवा जउणायड

नई + सोत्त = नइसोत्त (नदी का स्रोत) अथवा नईसोत्त

बहू + मुह = बहुमुह (वधू का मुख) अथवा बहूमुह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समास प्रयोग के उदाहरण

[अपभ्रंश काव्य सौरभ]

पाठ 1 = पउमचरिउ	पृष्ठ संख्या
कोसलणन्दणेण	= 5
आसाढट्ठमिहिं	= 5
सुर-समर-सहासेहिं	= 5
रहसुच्छलिय-गत्तु	= 6
जिण-वयणु	= 7
सीस-वलग्ग	= 8
सन्धि-वन्ध	= 8
गिरि-णइ-पवाह	= 9
राम-वप्पु	= 10
मेरु-सरिसु	= 10
अजरामरु	= 10
दिढ-वन्धणाइं	= 11
घर-दाराइं	= 11
अण्ण-दिणे	= 13
अत्थाण-मग्गो	= 14
चिन्तावण्णु	= 16
तुरङ्गम-णाएहिं	= 16
हियवए	= 17

पाठ 2 = पउमचरिउ	पृष्ठ संख्या
सुइ-सिद्धन्त-पुराणेहिं	= 20
दुट्ठ-कलत्तु	= 24
मयलञ्छण-विम्बु	= 24
बहु-दुक्खाउरु	= 24
दुग्ग-कुडुम्बु	= 24
विसयासत्तु	= 24
तव-वाएं	= 25
वर-उज्जाणइं	= 25
तव-चरणहो	= 26
चउ-कसाय-रिउ	= 26
अत्तावणु	= 27
तव-चरणु	= 27
दय-धम्मु	= 28

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जर-मरणु = 29

पाठ 3 = पउमचरिउ **पृष्ठ संख्या**

गुरु-वेसु = 32

सुन्दर-सराइं = 32

अक्खर-णिहाणु = 33

गयणङ्गणे = 34

जगणाहहो = 35

वहु-अंसु-जलोल्लिय = 39

भयाउरए = 40

पाठ 4 = पउमचरिउ **पृष्ठ संख्या**

आसा-पोट्टलु = 44

महि-मण्डलु = 44

जरढ-मयलञ्छणु = 45

वरिसिय-घणु = 45

अमर-वहूहिं = 45

भमरावलिहि = 45

दस-सिरु = 46

दस-सेहरु = 46

दस-मउडउ = 46

मुच्छा-विहलु = 46

भाइ-विओएं = 47

लक्खण-रामेहिं = 47

अद्धयन्द-बिम्बाइं = 48

दीह-विसालइं = 48

दट्ठोट्ठइं = 49

जीव-दया-परिचत्तउ = 50

गोग्गहे = 50

मित्त-परिग्गहे = 50

महिस-विस-मेसहिं = 52

अविणय-थाणें = 53

सउणाहारें = 53

मण-तुरउ = 53

पाठ 5 = पउमचरिउ **पृष्ठ संख्या**

हरिवंसुप्पण्णी = 56

वय-गुण-संपण्णी = 56

जिण-सासणे = 56

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोक्खुप्पत्ती	= 56	कयंतवासु	= 71
अन्तेउर-सारी	= 57	जम्मजरामरणइं	= 71
रयणासव-जाएं	= 57	चउगइदुक्खु	= 71
पड-पोट्टले	= 58	वक्कलणिवसणु	= 72
णहङ्गणु	= 58	वणहलभोयणु	= 72
मेरु-सिहरे	= 59	अहिमाणबिहंडणु	= 73
चउ-सायरहं	= 60	कोद्दवछेत्तहुं	= 75
गग्गिरवायए	= 61	तिलखलु	= 75
णिट्ठुर-हिययहो	= 61	चंदणतरु	= 75
डाइणि-रक्खस-भूय-भयङ्करे	= 61	लोहियसुक्कइं	= 76
		रसणफंसणरसदड्ढउ	= 76
कमलमाल	= 64	**पाठ 7 = महापुराण**	**पृष्ठ संख्या**
वट्टि-सिहए	= 65		
णर-णारिहिं	= 65	सीलसायरा	= 78
पाठ 6 = महापुराण	**पृष्ठ संख्या**	दुरियणासिणा	= 79
		कुलविहूसणं	= 79
पयराईवइं	= 68	केसरिकेसरु	= 79
केसरिकंधर	= 68	वरसइथणयलु	= 79
णिवकुमारवासं	= 69	कालाणलु	= 79
सामिसालतणुरुह	= 69	परमुण्णइ	= 79
कुमारगणु	= 69	सिहिसिहहिं	= 81

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रणंगणि = 84

रक्खाकंखइ = 85

माणभंगि = 85

णिवणिवासं = 87

वाणावलि = 89

मुणितंडउ = 89

रणभोयणु = 89

करिरयणइं = 90

णरउररयणइं = 90

गुरुकहिउ = 90

पाठ 8 = महापुराण **पृष्ठ संख्या**

रहसाऊरियाइं = 92

मच्छरभावभरिय = 93

महुरक्खरेहिं = 93

जयलच्छिगेह = 94

रामाहिराम = 94

महिमहिलहि = 94

णिवणायकुसल = 95

णियतायपायपंकरुहभसल = 95

धम्मपक्खु = 95

खरपहरणधारादारिएण = 95

णिवमल्ल = 97

णवजोव्वणेण = 97

णयवयणइं = 98

सीहासणछत्तइं = 98

पाठ 9 = जंबूसामिचरिउ **पृष्ठ संख्या**

रविगहणे = 100

नियघरु = 101

कणयमणिभरियउ = 102

दविणासए = 103

रयणसमूहु = 104

साहीणलच्छि = 104

सुण्णनिहि = 104

रच्छामुहे = 105

भयकंपिरु = 105

निसागमि = 106

कामुयजणु = 107

पियमणु = 107

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवियास = 107

सायरजलु = 109

हरि-करि = 109

संसारसमुद्दि = 111

पाठ 10 = सुदंसणचरिउ **पृष्ठ संख्या**

च्छोहजुत्तु = 113

रत्ताघरिसण = 115

वेसापमत्तु = 115

पारद्धिरत्तु = 116

गुरुमायबप्पु = 116

णियभुयबलेण = 117

णिद्दभुक्खु = 117

परयाररया = 119

सीलगुरुक्किय = 120

खगकिरायउवसग्गहं = 120

हरि-हलि-चक्कवट्टि-जिणमायउ = 120

सीलकमलसरहंसिउ = 120

फणिणरखयरामरहिं = 120

छारपुंजु = 120

पंडियलोयविवेउ = 122

दुट्ठसहाउ = 122

णिद्धणचित्ते = 122

सिद्धसमूहु = 123

पावकलंकु = 123

कामुयचित्ते = 123

णायणाहु = 124

कामाउरे = 124

विरहडाहु = 124

जलपवाहु = 124

पहुपेसणे = 125

पयसमासु = 125

धम्मोवएसु = 126

मइविसेसु = 126

चारित्तवित्तु = 126

पाठ 11 = सुदंसणचरिउ **पृष्ठ संख्या**

अमरिंदघरु = 128

पवरंबुणिही = 128

वरसुद्धमई = 129

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सुरवंदणीउ = 131
कलिमलु = 131
गुणमणिणिकेउ = 131
मोक्खलाहु = 132
कमलिणिदले = 133
दुट्ठपाविट्ठपोरत्थगणु = 133
पणट्ठरईसो = 136
जईसो = 136
सज्जणकामिणिसोत्तहिरामो = 136
सोहणमासे = 136
वयपालणे = 137
पियलोयणे = 137

पाठ 12 = करकंड-चरिउ **पृष्ठ संख्या**

उच्चकहाणी = 139
मंतिपयम्मि = 141
सीलणिहि = 141
विलासिणिमंदिरासु = 141
धरणिईसु = 144
रायणेहु = 145
णिवणंदणु = 145
परममित्तु = 145
हियइच्छिय = 145

पाठ 13 = धण्ण-कुमारचरिउ **पृष्ठ संख्या**

लउडि-खग्ग = 147
मारणत्थि = 147
वच्छउलइं = 147
भयतट्ठउ = 148
भयवसु = 148
सीह-भयाउर = 149
विसमावत्थहिं = 150
बहुदुक्खायरु = 151
पुर-सयासि = 151
दुख-दालिद्द-जडिउ = 152
पुव्वक्किय = 152
पवणाहय = 153
भयभीयउ = 153
संसार-सरूवउ = 153
दुहभरिया = 154
गिरि-गुह-वारि = 155
कर-चलणइं = 155

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दहदिसि = 155

कमलवत्त = 157

चलण-कर = 157

सग्गवासि = 158

सोक्खरासि = 158

णियगुरु-चरणारविंद = 158

मोहाउर = 159

जिणवयणु = 160

देवपुज्जु = 162

कर-चरण = 162

गुह-अब्भंतरि = 163

चिरकह = 163

बहु-सुह-छण्णउ = 164

पाठ 14 = हेमचन्द्र - के दोहे **पृष्ठ संख्या**

गिरि-सिंगहुं = 165

खल-वयणाइं = 166

उज्जाण-वणेहिं = 171

कसाय-बलु = 172

पाठ 15 = परमात्म-प्रकाश **पृष्ठ संख्या**

पंच-गुरु = 174

देह-विभिण्णउ = 175

परमप्पु = 175

पुव्व-कियाइं = 180

इंदिय-सुह-दुहइं = 180

मण-वावारु = 180

देहादेहहिं = 181

जीवाजीव = 181

भव-तणु-भोय-विरत्त-मणु = 182

देहादेवलि = 182

अणाइ-अणंतु = 182

केवल-णाण-फुरंत-तणु = 182

परमप्पु = 182

पाठ 16 = पाहुडदोहा **पृष्ठ संख्या**

अप्पायत्तउ = 183

विसयसुह = 184

सासयसुहु = 184

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिच्चलठियइं = 185

सुमिट्ठाहार = 188

दुज्जणउवयार = 188

गुणसारा = 188

कम्मविणिम्मिय = 189

कम्मविसेसु = 190

पाठ 17 = सावय-धम्मदोहा	पृष्ठ संख्या

सायरगयहिं = 193

भवजलगयहं = 193

मणवयकायहिं = 193

पसुधणधण्णइं = 194

परिमाणपवित्ति = 194

पत्थरणाव = 195

उवहिणीरु = 196

दुक्खसयाइं = 198

इंधणकज्जें = 199

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कारक

हम यह जानते हैं कि भाषा सम्प्रेषण का बहुत ही प्रभावशाली माध्यम है। यह समझना जरूरी है कि भाषा में वाक्य एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। वाक्य के माध्यम से श्रोता तक अपनी बात को सार्थक ढंग से पहुँचाना अपेक्षित है। वाक्य में संज्ञा-सर्वनाम आदि शब्दों का प्रयोग होता ही है। सार्थक रूप से अपनी बात कहने के लिए संज्ञा शब्द को सदैव एक रूप में ही प्रयोग नहीं किया जा सकता है। संज्ञा शब्दों का रूप परिवर्तन करके ही उन्हें सार्थक बनाया जा सकता है। इस रूप परिवर्तन के लिए उनमें 'प्रत्यय' लगाये जाते हैं। इन प्रत्ययों के लगने से ही विभक्तियों का बोध होता है। इसका यह अर्थ हुआ कि संज्ञा शब्द में आठ प्रकार की विभक्तियों के प्रत्यय लगाकर वाक्य में प्रयोग किया जा सकता है। इसी कारण अपभ्रंश व्याकरण में संज्ञा में आठ विभक्तियाँ बताई गई हैं। ये आठ विभक्तियां निम्नलिखित हैं-

विभक्ति	प्रत्यय चिह्न		
प्रथमा	ने	1	छात्र ने गुरु को प्रणाम किया।
द्वितीया	को	2	छात्र ने गुरु को प्रणाम किया।
तृतीया	से, (के द्वारा)	3	गोपाल पानी से मुँह धोता है।
चतुर्थी	के लिए	4	पुत्र सुख के लिए जीता है।
पंचमी	से (पृथक् अर्थ में)	5	पेड़ से पत्ता गिरता है।
षष्ठी	का, के, की	6	राज्य का शासन प्रजा को पालता है।
सप्तमी	में, पर	7	आकाश में बादल गरजते हैं।
संबोधन	हे	8	हे बालक! पुस्तक पढ़ो।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस तरह संज्ञा शब्दों को वाक्य में प्रयुक्त करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रत्यय लगाकर संप्रेषण का कार्य किया जाता है।

अब हमें देखना यह है कि उपर्युक्त वाक्यों में संज्ञा शब्द का क्रिया से क्या संबंध है? और उस संबंध को व्याकरण में क्या कहा गया है?

1, 2. प्रणाम क्रिया को करने वाला 'छात्र' है और 'गुरु' क्रिया का कर्म है।

अतः इसको क्रमशः **कर्त्ता कारक** और **कर्म कारक** कहा गया है।

3. 'धोना' क्रिया का सम्पादन पानी से होता है।
अतः इसे **करण कारक** कहा गया है।

4. 'जीना' क्रिया का सम्पादन 'सुख के लिए' है।
अतः इसे **सम्प्रदान कारक** कहा गया है।

5. 'गिरना' क्रिया पेड़ से हुई है।
अतः 'गिरना' क्रिया का होना पेड़ से है।
अतः इसे **अपादान कारक** कहा गया है।

6. इस वाक्य में 'राज्य' का संबंध क्रिया से नहीं है।
अतः इसको **कारक** नहीं कहा गया है किन्तु यह **विभक्ति** राज्य का संबंध शासन से बताती है।

7. इस वाक्य में 'गरजने' की क्रिया आकाश में हुई है।
अतः इसको **अधिकरण कारक** कहा गया है।

8. 'हे बालक' इसका 'पढ़ना' क्रिया से कोई संबंध नहीं है।
अतः इसको (**संबोधन** को) **कारक** नहीं माना गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इससे यह अर्थ निकला कि **कारक** वही कहलाता है जिसका क्रिया के साथ सीधा संबंध हो।

यदि हम **कारक** और **विभक्ति** प्रत्ययों को मिलाकर लिखें तो निम्नलिखित रूप हमारे सामने आता है।

प्रथमा विभक्ति	–	कर्त्ता कारक
द्वितीया विभक्ति	–	कर्म कारक
तृतीया विभक्ति	–	करण कारक
चतुर्थी विभक्ति	–	सम्प्रदान कारक
पंचमी विभक्ति	–	अपादान कारक
षष्ठी विभक्ति	–	×
सप्तमी विभक्ति	–	अधिकरण कारक
संबोधन	–	×

अतः कहा जा सकता है कि व्याकरण का **सैद्धान्तिक पक्ष** कारक है किन्तु विभक्ति **व्यवहारिक पक्ष** का द्योतक है। सम्प्रेषण के लिए **विभक्तियों** का प्रयोग ही किया जाता है।

अपभ्रंश में कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण ये छः कारक हैं। अपभ्रंश के वैयाकरणों ने सम्बन्ध को कारक नहीं माना है और न षष्ठी विभक्ति के रूपों को ही पृथक् स्थान दिया है। षष्ठी के रूप चतुर्थी के समान ही होते हैं।

छह कारकों का बोध कराने वाली विभक्तियाँ हैं। इतना होने पर भी कारक और विभक्ति में भेद है। कर्त्ता में सर्वदा प्रथमा और कर्म में द्वितीया विभक्ति नहीं होती है, परन्तु कर्ता में तृतीया और कर्म में प्रथमा विभक्ति भी होती है। जैसे – "**रावण/रावणा/रावणु/रावणो** (1/1)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रामेण/रामें (3/1) हअ/हउ'' आदि इस वाक्य में 'हनन' क्रिया का वास्तविक कर्ता 'राम' है, पर राम प्रथमा विभक्ति में नहीं है, **तृतीया विभक्ति** में रखा गया है। इसी प्रकार 'हनन' क्रिया का वास्तवकि कर्म रावण है, उसे द्वितीया विभक्ति में न रखकर **प्रथमा विभक्ति** में रखा गया है।

प्रथमा विभक्ति : कर्ता कारक

1. जिस व्यक्ति या वस्तु के विषय में कुछ कहा जाता है उसे वाक्य का **कर्त्ता** कहते हैं और वह प्रथमा विभक्ति में रखा जाता है। जैसे- **नरिंद/नरिंदा/नरिंदु/नरिंदो** (1/1) परमेसर/परमेसरा/परमेसरु (2/1) पणमइ आदि (राजा परमेश्वर को प्रणाम करता है) इस वाक्य में 'पणमइ' क्रिया को करने वाला 'नरिंद' कर्ता है और प्रथमा विभक्ति में है। इस तरह से **कर्तृवाच्य** के **कर्त्ता** में प्रथमा विभक्ति होती है।

2. **कर्मवाच्य** में वाक्य बनाते समय **कर्तृवाच्य** के **कर्म** में प्रथमा विभक्ति होती है। मायाए/मायए (3/1) **कहा/ कह** (1/1) सुणिज्जइ/सुणिअइ/आदि (माता के द्वारा कथा सुनी जाती है)। यहाँ **कहा** प्रथमा विभक्ति में है। इस वाक्य का **कर्तृवाच्य** हुआ माया/माय (1/1) कहा/कह (2/1) सुणइ/आदि।

3. (i) प्रथमा विभक्ति का उपयोग शब्द का अर्थ और लिंग दोनों बतलाने के लिए किया जाता है। अत: जब किसी शब्द का कोई अर्थ निकालना हो तो उस शब्द में प्रथमा विभक्ति लगाते हैं। जैसे - **(नरिंद/नरिंदा/नरिंदु/नरिंदो)** शब्द से ज्ञात होता है कि यह शब्द पुल्लिंग है और इसका अर्थ 'राजा' है। इसी प्रकार **(तड/तडा/तडु/तडो) पु. (तडी/ तडि) स्त्री. (तड/तडा/ तडु) नपु.** शब्द प्रथमा विभक्ति में रखे गये हैं और 'किनारा'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इनका अर्थ है। इसलिए संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण में अर्थ निकालने के लिए प्रथमा विभक्ति के प्रत्यय जोड़े जाते हैं। **सो** (पु.), **सा** (स्त्री.), **तं** (नपुं.), **मणोहरो** (पु.), **मणोहरा** (स्त्री.), **मणोहरु** (नपुं.)।

(ii) वस्तु का परिमाण या नाप बताने के लिए प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे- **(सेर/सेरा/सेरु/सेरो)** वि. पु. **(गोहूम/गोहूमा/गोहूमु/गोहूमो)** पु. (एक सेर गेहूँ)। यहाँ प्रथमा विभक्ति से 'सेर' का नाप विदित होता है।

(iii) संख्या का ज्ञान कराने के लिए भी प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे - **एक्को** (एक), **तिण्णि** (तीन), आदि।

4. सम्बोधन में प्रायः प्रथमा विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे **हे देवो/देव/देवा/देवु, हे साहू/साहु**। अन्य रूप भी मिलते हैं। जैसे - हे कमल, हे वारि, हे महु, हे गाम्रणि, हे सयंभु, हे लच्छि, हे बहु आदि।

कर्त्ता और क्रिया का समन्वय

1. क्रिया का पुरुष तथा वचन **कर्त्ता** के अनुसार होता है। जैसे -
(i) राम/रामा/रामु/रामो (1/1) झाअइ/आदि (राम ध्यान करता है।)
(ii) तुहुं (1/1) झाअहि/झाअसि/आदि (तुम ध्यान करते हो।)
(iii) हउं (1/1) झाउं/झाआमि/आदि (मैं ध्यान करता हूँ।)

2. वाक्यों में जब दो या **दो से अधिक कर्ता संज्ञाएँ** हों तो क्रिया **बहुवचन** की होगी। जैसे -
राम/रामा/रामु/रामो (1/1) हरी/हरि (1/1) य चिट्ठहिं/चिट्ठन्ति/ आदि (राम और हरी बैठते हैं।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

3. जब अनेक संज्ञाएँ अलग-अलग समझी जाती हैं अथवा अनेक संज्ञाएँ एक साथ मिलकर केवल **एक विचार** को प्रकट करती हैं तो क्रिया एकवचन की होगी। जैसे -
कोह/कोहा/कोहु/कोहो, माणु, माया/माय, लोहो (1/1) संति/संती (2/1) नासेइ/आदि (क्रोध मान माया लोभ शांति को नष्ट करते हैं।)

4. जब वाक्य में एकवचन का (संज्ञा कर्त्ता) कर्त्ता **अथवा** से जुड़े होते हैं तो एकवचन की क्रिया आती है। किन्तु जब कर्ता भिन्न वचनों का हो, तो क्रिया निकटतम कर्ता के अनुसार होगी। जैसे-
(i) राया (1/1) मन्ती/मन्ति (1/1) वा वियारइ/आदि (राजा अथवा मंत्री विचार करता है।)
(ii) ससा/सस (1/1) वा भाई/भाइ (1/1) वा **बालअ/बालआ** (1/2) आगच्छहिं/आगच्छन्ति/आदि (बहिन अथवा भाई अथवा बालक आते हैं।)

5. जब उत्तम, मध्यम तथा अन्य पुरुष के कर्ता हों तो क्रिया **उत्तम पुरुष बहुवचन** की होगी और जब मध्यम तथा अन्य पुरुष का कर्ता हो तो क्रिया **मध्यम पुरुष बहुवचन** की होगी। जैसे-
(i) सो, तुहुं, **हउं** च उट्ठहुं/आदि (वह, तुम और मैं उठते हैं।)
(ii) सो, **तुहुं** च उट्ठहु/आदि (वह और तुम उठते हो।)

6. जब भिन्न-भिन्न पुरुषों के दो या दो से अधिक कर्ता **अथवा** से जुड़े हों, तो क्रिया का पुरुष और वचन **निकटतम पद** के अनुसार होगा। जैसे -
(i) सो, **अम्हे/अम्हइं** वा कज्ज/कज्जा/कज्जु (2/1) करहुं/आदि (वह अथवा हम कार्य करते हैं।)
(ii) अम्हे/अम्हइं, **सो** वा कज्ज/कज्जा/कज्जु (2/1)करइ (हम अथवा वह कार्य करता है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्वितीया विभक्ति : कर्मकारक

1. जिस व्यक्ति या वस्तु पर किसी क्रिया का प्रभाव पड़ता है, वह उस क्रिया का **कर्म** कहलाता है, जैसे - माया/माय (1/1) **कहा/कह** (2/1) सुणइ/आदि (माता कथा को सुनती है।) यहाँ सुनना क्रिया का प्रभाव कथा पर समाप्त होता है। इसलिए 'कहा' कर्मकारक हुआ, उसमें द्वितीया विभक्ति रखी गई है। यहाँ यह समझना चाहिए कि कर्मवाच्य को छोड़कर सभी जगह कर्म द्वितीया विभक्ति में रखा जाता है, जैसे बताया गया है कि कर्मवाच्य में कर्म प्रथमा विभक्ति में रखा जाता है, जैसे- मायाए/ मायए (3/1) **कहा/कह** (1/1) सुणिज्जइ/सुणिअइ/ आदि

2. **द्विकर्मक** क्रियाओं के योग में **मुख्य कर्म** में द्वितीया विभक्ति होती है और **गौण कर्म** में अपादान, अधिकरण, सम्प्रदान, सम्बन्ध आदि विभक्तियों के होने पर भी द्वितीया विभक्ति होती है।

(i) वह गाय से दूध दुहता है - सो (1/1) **गावी/गावि** (2/1) दुद्ध/दुद्धा/दुद्धु (2/1) दुहइ/आदि (अपादान 5/1 की विभक्ति के स्थान पर)

(ii) वह वृक्ष के फलों को इकट्ठा करता है - सो (1/1) **रुक्ख/ रुक्खा/रुक्खु** (2/1) फल/फला/फलइं/फलाइं (2/2) चुणइ/ आदि (सम्बन्ध 6/1 की विभक्ति के स्थान पर)

(iii) गुरु शिष्य के लिए धर्म का उपदेश देता है - गुरु/गुरू (1/1) **सिस्स/सिस्सा/सिस्सु** (2/1)धम्म/धम्मा/धम्मु (2/1) उवदिसइ/आदि (सम्प्रदान 4/1 के स्थान पर)

(iv) वह राजा से धन माँगता है - सो (1/1) **नरिंद/नरिंदा/**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नरिंदु (2/1) धण/धणा/धणु (2/1) मग्गइ/आदि (अपादान 5/1 के स्थान पर)

(v) वह अग्नि से धान पकाता है - सो (1/1) **अग्गि/अग्गी** (2/1) धण्ण/धण्णा/धण्णु (2/1) पचइ/आदि (करण 3/1के स्थान पर)

(vi) वह पुत्र को गाँव में ले जाता है - सो (1/1) पुत्त/पुत्ता/पुत्तु (2/1) **गाम/गामा/गामु** (2/1) वहइ/आदि अथवा णीणइ/ आदि (अधिकरण 7/1के स्थान पर)

पुच्छ (पूछना), **रुंध** (रोकना), **मह** (मथना), **मुस** (चोरी करना) आदि **द्विकर्मक** क्रियाओं का प्रयोग भी कर लेना चाहिए।

उपर्युक्त क्रियाओं के पर्यायवाची अर्थ में भी **प्रधान** और **गौण कर्म** में द्वितीया विभक्ति होती है।

इनके कर्मवाच्य बनाने में **गौण कर्म** में प्रथमा हो जाती है और **प्रधान कर्म** में द्वितीया ही रहती है। किन्तु गत्यार्थक धातु के योग में 'वह' के **प्रधान कर्म** को प्रथमा में रखा जाता है और **गौण कर्म** द्वितीया में रहता है।

(i) सो (1/1)**मित्त/मित्ता/मित्तु** (2/1) पह/पहा/पहु (2/1) पुच्छइ/आदि (कर्तृवाच्य) तेण/तेणं/तें (3/1) **मित्त/मित्ता/मित्तु/ मित्तो** (1/1) पह/पहा/ पहु (2/1) पुच्छिज्जइ/आदि (कर्मवाच्य)

(ii) सो (1/1) **गावि/गावी** (2/1)दुद्ध/दुद्धा/दुद्धु (2/1) दुहइ/ आदि (कर्तृवाच्य) तेण/तेणं/तें (3/1)**गावि/गावी** (1/1) दुद्ध/ दुद्धा/दुद्धु (2/1) दुहिज्जइ/आदि (कर्मवाच्य)

(iii) सो (1/1) पुत्त/पुत्ता/पुत्तु (2/1) **गाम/गामा/गामु**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(2/1)वहइ/आदि (कर्तृवाच्य) तेण/तेणं/तें (3/1) पुत्त/पुत्ता/पुत्तु/पुत्तो (1/1) **गाम/गामा/गामु** (2/1) वहिज्जइ/आदि (कर्मवाच्य)

इसी प्रकार अन्य वाक्य बना लेने चाहिए। यहाँ गत्यार्थक धातु के योग में 'वह' को छोड़कर अन्य क्रियाओं के योग में **गौण कर्म** में प्रथमा विभक्ति रखी गई है। यहाँ यह जानना चाहिए कि "क्रिया के अर्थ को पूर्ण करने के लिए जिस संज्ञा शब्द को अनिवार्यत: कर्म कारक में रखा जाए वह **प्रधान कर्म** होता है और जिसे वक्ता अपनी इच्छा से कर्मकारक में रखता है (वह चाहे तो दूसरे कारक में भी रख सकता है) वह **गौण कर्म** होता है।" (संस्कृत रचना, आप्टे पेज 29)

3. सभी **गत्यार्थक** क्रियाओं के योग में द्वितीया विभक्ति होती है, जैसे - सो **घर/घरा/घरु** (2/1) गच्छइ/आदि (वह घर जाता है।)

4. **सप्तमी** के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है जैसे- सूरपयासो **दिण/दिणा/दिणु** (2/1) पसरइ/आदि सूर्य का प्रकाश दिन में फैलता है। यहाँ **दिणे** (सप्तमी) के स्थान पर **दिण/दिणा/दिणु** (द्वितीया) हुई है।

5. **प्रथमा विभक्ति** के स्थान पर कभी-कभी द्वितीया विभक्ति होती है, जैसे - **चउवीसं** (2/1) जिणवरा (1/2)। यहाँ होना चाहिए- चउवीसा 1/1 जिणवरा 1/2 ।

   नोट :- संख्यावाची शब्दों के रूपों के लिए देखें प्रौढ अपभ्रंश रचना सौरभ पृ० 37-46 ।

6. यदि **वस** क्रिया के पूर्व **उव, अनु, अहि** और **आ** में से कोई भी उपसर्ग हो तो क्रिया के आधार में द्वितीया होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हरी/हरि (1/1) **सग्ग/सग्गा/सग्गु** (2/1) उववसइ/अनुवसइ/अहिवसइ/आवसइ/आदि। (हरी स्वर्ग में वास करता है।)

यदि हम **वस** का ही प्रयोग करेंगे तो 'हरी **सग्गि/सग्गे** (7/1) वसइ' वाक्य बनेगा। यहाँ द्वितीया विभक्ति नहीं हुई है।

7. **उभओ** (दोनों ओर), **सव्वओ** (सब ओर), **धि** (धिक्कार), **समया** (समीप) – इनके साथ द्वितीया विभक्ति होती है। जैसे – परिजणु (1/1) **नरिंद/नरिंदा/नरिंदु** (2/1) **उभओ/सव्वओ** चिट्ठइ (परिजन राजा के चारों ओर/दोनों ओर बैठते हैं।)

धि दुज्जण/दुज्जणा/दुज्जणु (2/1) (दुर्जन को धिक्कार), **गाम/गामा/गामु** (2/1) **समया** एक्कु तडागु (1/1) अत्थि (गाँव के समीप एक तालाब है।)

8. **अन्तरेण** (बिना) और **अन्तरा** (बीच में, मध्य में) के योग में द्वितीया होती है।

(i) **णाण/णाणा/णाणु** (2/1) **अन्तरेण** न सुहु (1/1) (ज्ञान के बिना सुख नहीं है।)

(ii) **गंग/गंगा** (2/1) **जउणा/जउण** (2/1) य अन्तरा पयागु (1/1) अत्थि (गंगा और यमुना के बीच में प्रयाग है।)

9. **पडि** (की ओर, की तरफ) के योग में द्वितीया होती है। जैसे –

माया/माय (2/1) **पडि** तुहुं (1/1) सनेह (2/1) करहि/करसि/ आदि (माता की ओर तुम स्नेह रखते हो)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

10. **समय** एवं **मार्गवाची** शब्दों में द्वितीया विभक्ति होती है, जैसे -

(i) सो (1/1) **पंच दिणा/दिणाइं**/आदि (2/2) खेत्त (2/1) सिंचिअ/सिंचिआ/सिंचिउ/सिंचिओ (भूकृ 1/1) (वह पाँच दिन तक खेत सींचता रहा)।

(ii) सो (1/1) **कोस/कोसा/कोसु** (2/1) चलइ (वह कोस भर चलता है।)

यहाँ **पंच दिणाइं** - द्वितीया विभक्ति में रखा गया है और **कोस/कोसा/कोसु** भी द्वितीया विभक्ति में है। (यह प्रयोग उस समय होता है जब निरन्तरता हो, समाप्ति नहीं)।

11. **दूर** (नपुं.) व **अंतिय** (समीप) (नपुं.) तथा इनके **समानार्थक** शब्द द्वितीया विभक्ति में रखे जाते हैं। जैसे -

(i) गामहे/गामाहे/गामहु/गामाहु (5/1) **दूरं** (2/1) णई/णइ (1/1) अत्थि। (गाँव से दूर नदी है।)

(ii) सरिआ/सरिअ/सरिआहे/सरिअहे (6/1) **अंतियं** जई/जइ (1/1) वसइ/आदि (नदी के समीप यति बसता है।)

12. **विणा** के योग में द्वितीया होती है। जैसे -

माया/माय (2/1) विणा सिक्खा/सिक्ख (1/1) न होइ/आदि (माता के बिना शिक्षा नहीं होती है।)

13. कभी-कभी संज्ञा शब्द की द्वितीया विभक्ति का **एक वचन क्रियाविशेषण** के रूप में प्रयुक्त होता है। जैसे -
सो (1/1) **सुहं** (2/1) विहरइ/आदि (वह सुखपूर्वक रमण करता है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभ्यास

1. उसके द्वारा पुस्तक पढ़ी जाती है। 2. वह बालक से पथ पूछता है। 3. वह गाय से दूध दूहता है। 4. वह पेड़ से फूल इकट्ठा करता है। 5. मुनि बालक के लिए धर्म का उपदेश देता है। 6. वह उससे धन माँगता है। 7. तुम अग्नि से भोजन पकाओ। 8. राजा मंत्री को नगर में ले जाता है। 9. मैं देवालय जाता हूँ। 10. वह रात्रि में मित्र को याद करता है। 11. सज्जन के बिजली की तरह अस्थिर क्रोध होता है। 12. देव स्वर्ग में रहते हैं। 13. कृष्ण के चारों ओर बालक हैं। 14. नगर के समीप नदी है। 15. उसके बिना मैं जाता हूँ। 16. नदी और नगर के बीच में वन है। 17. बालक की ओर तुम स्नेह रखते हो। 18. वह बारह वर्ष तक रहता है। 19. मैं कोस भर चलता हूँ। 20. नदी नगर से दूर है। 21. समुद्र के निकट लंका है। 22. वह दुःखपूर्वक जीता है।

तृतीया विभक्ति - करण कारक

1. अपने कार्य की सिद्धि में जो कर्ता के लिए अत्यन्त सहायक होता है, वह **करण** कहा जाता है। उसे तृतीया विभक्ति में रखा जाता है। जैसे -

   (i) राम/रामा/रामु/रामो (1/1) **बाणेण/बाणेणं/बाणें** (3/1) रावण/रावणा/रावणु (2/1) मारइ/आदि (राम बाण से रावण को मारता है।)

   (ii) पुत्तु (1/1) **जलेण/जलेणं/जलें** (3/1) वत्थु (2/1) पच्छालइ/आदि (पुत्र जल से वस्त्र धोता है।)

2. **कर्मवाच्य** और **भाववाच्य** में तृतीया होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(i) नरिंद/नरिंदा/नरिंदु/नरिंदो (1/1) कहा/कह (2/1) सुणइ/आदि (कर्तृवाच्य) - **नरिंदेण/नरिंदेणं/नरिंदें** (3/1) कहा/कह (1/1) सुणिज्जइ/सुणिअइ/आदि (कर्मवाच्य)

(ii) नरिंदु (1/1) हसइ/आदि (कर्तृवाच्य) - **नरिंदेण/नरिंदेणं/नरिंदें** (3/1) हसिज्जइ/आदि (भाववाच्य)

3. **कारण** व्यक्त करने वाले शब्दों में तृतीया होती है, जैसे -

(i) सो (1/1) **अवराहें** (3/1) लुक्कइ (वह अपराध के कारण छिपता है।)

(ii) तुहुं (1/1) **उज्जमेण** (3/1) धणु (2/1) लभहि/आदि (तुम प्रयत्न के कारण धन प्राप्त करते हो।)

(iii) **विज्जाए/विज्जए** (3/1) पइट्ठा/पइट्ठ (1/1) होइ (विद्या के कारण प्रतिष्ठा होती है।)

(iv) सो (1/1) **अज्झयणें** (3/1) **वसइ**/आदि (वह अध्ययन के कारण रहता है/बसता है।)

4. फल प्राप्त या कार्य सिद्ध होने पर **कालवाचक** और **मार्गवाचक** शब्दों में तृतीया होती है।

(i) सो (1/1) **दहहिं/दसहिं** (3/2) **दिणहिं/दिणेहिं** (3/2) गंथु (2/1) पढिअ/आदि (उसने दस दिनों में ग्रन्थ पढ़ा।)

(ii) मित्तु (1/1) **तीहिं/तीहि**/आदि **दिणेहिं/दिणहिं** (3/2) णिरोगु (1/1) होउ/आदि (मित्र तीन दिनों में निरोग हुआ।)

(iii) **एकें कोसें** (3/1) कज्जु (1/1) होअ/होउ/आदि (एक कोस पर कार्य हुआ।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

5. **सह, सद्धिं, समं** (साथ) अर्थ वाले शब्दों के योग में तृतीया विभक्ति होती है।

(i) सो (1/1) **मित्तेण** (3/1) सह गच्छइ/आदि (वह मित्र के साथ जाता है।)

(ii) लक्खणु (1/1) **रामेण** (3/1) समं गच्छिअ/गच्छिउ/आदि (लक्ष्मण राम के साथ गया था।)

(iii) हणुवंत (1/1) **रामें** (3/1) सद्धिं सोहइ/आदि (हनुमान राम के साथ शोभता है।)

6. **'विणा'** शब्द के साथ **द्वितीया, तृतीया** या **पंचमी** विभक्ति होती है।

जलें (3/1) / **जलहे** (5/1) **जलु** (2/1) विणा णरु (1/1) न जीवइ/आदि (जल के बिना मनुष्य नहीं जीता है।)

7. **तुल्य** (समान, बराबर) का अर्थ बताने वाले शब्दों के साथ **तृतीया** अथवा **षष्ठी** होती है।

(i) सो **देवें** (3/1)/ **देवस्सु/देवहो/देवसु** (6/1) तुल्लो अत्थि (वह देव के तुल्य/समान है।)

(ii) **धम्में** (3/1/)/ **धम्मस्सु/धम्माहो/धम्मासु** (6/1) समाणु मित्तु (1/1) ण अत्थि (धर्म के समान मित्र नहीं है।)

8. शरीर के **विकृत अंग** को बताने के लिए तृतीया विभक्ति होती है।

(i) सो **पाएण** (3/1) खंजु (1/1) अत्थि (वह पैर से लगड़ा है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(ii) सो **कण्णेणं** (3/1) बहिरु (1/1) अत्थि (वह कान से बहरा है।)

(ii) सो **णेत्तें** (3/1) काणु (1/1) अत्थि (वह नेत्र से काणा है।)

9. **क्रियाविशेषण** शब्दों में भी तृतीया का प्रयोग होता है।

जैसे - नरिंदु (1/1) **सुहेण** (3/1) जीवइ/आदि (राजा सुखपूर्वक जीता है।)

10. कभी-कभी **सप्तमी** के स्थान पर **तृतीया** का प्रयोग पाया जाता है।

जैसे - **तेणं कालेणं, तेण समएणं** (3/1) (उस काल में) (उस समय में)

11. **किं, कज्जो, अत्थो** - इसी प्रकार प्रयोजन प्रकट करने वाले शब्दों के योग में आवश्यक वस्तु को तृतीया में रखा जाता है। जैसे -

(i) **मूढें मित्तें** (3/1) किं? (मूर्ख मित्र से क्या लाभ है?)

(ii) ईसरहं/ईसराहं (6/2) **तिणें** (3/1) वि कज्जो (1/1) हवइ (धनी लोगों का कार्य तिनके से भी हो जाता है।)

(iii) को अत्थो (1/1) **तेण पुत्तेण** (3/1) जो ण विउसो (1/1) ण धम्मिओ (1/1) (उस पुत्र से क्या प्रयोजन जो न विद्वान है और न धार्मिक है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभ्यास

1. वह जल से हाथ धोता है। 2. उसके द्वारा सूर्य देखा जाता है। 3. कन्या के द्वारा शरमाया जाता है। 4. पुण्य के कारण हरि दिखे। 5. हरि पाँच दिनों में कोस भर गया। 6. वह बारह वर्षों में व्याकरण पढ़ता है। 7. पुत्र के साथ पिता जाता है। 8. पिता पुत्र के साथ खेलता है। 9. जल के बिना कमल नहीं खिलता। 10. वह राजा के समान है। 11. वह कान से बहरा है। 12. वह स्नेहपूर्वक घर आता है। 13. शील के विनष्ट होने पर उच्च कुल से क्या? 14. धनी लोगों का कार्य तिनके से भी हो जाता है।

चतुर्थी विभक्ति - सम्प्रदान कारक

1. दान कार्य के द्वारा कर्त्ता जिसे सन्तुष्ट करना चाहता है, उस व्यक्ति की **सम्प्रदान कारक** संज्ञा होती है। संप्रदान को बताने वाले संज्ञापद को चतुर्थी में रखते हैं। जैसे राउ (1/1) **णिद्धणहो/णिद्धणस्स/णिद्धणस्सु** (4/1) धण (2/1) देइ (राजा निर्धन के लिए धन देता है।)

2. जिस **प्रयोजन** के लिए कोई कार्य होता है, उस **प्रयोजन** में चतुर्थी होती है। जैसे -

   (i) सो **मुत्तीए/मुत्तिए** (4/1) हरि /हरी (2/1) भजइ/आदि (वह मुक्ति के लिए हरि को भजता है।)

   (ii) तुहुं **धणस्सु/धणाहो** (4/1) चेट्ठहि/चेट्ठसि (तुम धन के लिए प्रयत्न करते हो।)

3. **रोअ** (अच्छा लगना) तथा **रोअ** के समान अर्थ वाली अन्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रियाओं के योग में प्रसन्न होने वाला सम्प्रदान कहलाता है, उसमें चतुर्थी होती है। जैसे –

बालअस्सु/बालाहो (4/1) पुप्फइं/पुप्फाइं (1/2) रोअन्ति/रोअहिं/आदि (बालक को फूल अच्छे लगते हैं/रुचते हैं।)

4. **कुज्झ** (क्रोध करना), **दोह** (द्रोह करना), **ईस** (ईर्ष्या करना), **असूअ** (घृणा करना) क्रियाओं के योग में तथा इसके **समानार्थक** क्रियाओं के योग में, जिसके ऊपर क्रोध आदि किया जाए उसे चतुर्थी में रखा जाता है। जैसे –

(i) लक्खणु (1/1) **रावणहो/रावणस्सु** (4/1) कुज्झइ/आदि (लक्ष्मण रावण पर क्रोध करता है।)

(ii) रावणु (1/1) **रामाहो/रामस्सु** (4/1) ईसइ/आदि (रावण राम से ईर्ष्या करता है।)

(iii) महिला/महिल (1/1) **हिंसा/हिंसाहे/हिंसहे** (4/1) असूअइ/आदि (महिला हिंसा से घृणा करती है।)

(iv) दुट्ठ मणुस (1/1) **सज्जणाहो/सज्जणस्सु** दोहइ/आदि (दुष्ट मनुष्य सज्जन से द्रोह करता है।)

5. **नमो** (णमो) के योग में चतुर्थी होती है – **महावीराहो/महावीरस्सु** (4/1) नमो (णमो) (महावीर को नमस्कार)। 'णम' क्रिया के योग में द्वितीया और चतुर्थी दोनों होती हैं। (प्रयोग वाक्य देखें)।

6. **अलं** (पर्याप्त के अर्थ में) चतुर्थी होती है। जैसे – झाणु (1/1) **मोक्खहो/मोक्खस्सु** (4/1) अलं अत्थि (ध्यान मोक्ष के लिए पर्याप्त है।)

7. **सिह** (चाहना) क्रिया के योग में चतुर्थी होती है। जैसे – सो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जसाहो/जसस्सु (4/1) सिहइ/आदि (वह यश को चाहता है।)

8. **कह** (कहना), **संस** (कहना), **चक्ख** (कहना) क्रियाओं के योग में और इसी अर्थ की अन्य क्रियाओं के योग में जिस व्यक्ति से कुछ कहा जाता है उसमें चतुर्थी होती है। जैसे – हउं (1/1) तउ/तुज्झ/तुध्र (4/1) सच्च (2/1) कहउं/कहमि/कहामि/आदि संसउं/संसमि/संसामि/आदि चक्खउं/चक्खामि आदि(मैं तुम्हारे लिए सत्य कहता हूँ।)

9. चतुर्थी के अर्थ में **अत्थं** (अव्यय) का प्रयोग भी होता है, जैसे- सो **णाणत्थं** (4/1) चेट्ठइ/आदि (वह ज्ञान के लिए प्रयत्न करता है।)

अभ्यास

1. वह पुत्री के लिए धन देता है। 2. वह धन के लिए प्रयत्न करता है। 3. हरि को भक्ति अच्छी लगती है। 4. राजा मंत्री पर क्रोध करता है। 5. मंत्री राजा को नमस्कार करता है। 6. धान भोजन के लिए पर्याप्त है। 7. वह मुक्ति की चाह रखता है। 8. माता पुत्री के लिए कथा कहती है। 9. राजा भोजन के लिए बैठता है। 10. वह राजा से ईर्ष्या करता है। 11. राम असत्य से घृणा करते हैं।

पंचमी विभक्ति – अपादान कारक

1. जिससे किसी वस्तु का अलग होना पाया जाता है, उसे **अपादान** कहते हैं। जैसे – **रुक्खहु/रुक्खहे** (5/1) पुप्फु (1/1) पडइ/ आदि यहाँ फूल पेड़ से अलग हो रहा है। इसी प्रकार – **गामहु/ गामाहे** (5/1) मित्तु (1/1) आगच्छइ/आदि – (यहाँ गाँव से वियोग पाया जाता है। अतः **रुक्ख** और **गाम** में पंचमी रखी जाती है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

2. गुणवाचक अस्त्रीलिंग संज्ञा शब्द (पुल्लिंग, नपुंसकलिंग संज्ञा शब्द)जो किसी क्रिया या घटना का कारण बताता है, उसे तृतीया या पंचमी विभक्ति में रखा जाता है। जैसे -

(i) सो **मुक्खहे/मुक्खाहु** (5/1) ण सोहइ/आदि (वह मूर्खता के कारण नहीं शोभता है।)

(ii) सो **मुक्खें/मुक्खेण/मुक्खेणं** (3/1) ण सोहइ/आदि (वह मूर्खता के कारण नहीं शोभता है।)

क. लेकिन अस्त्रीलिंग संज्ञा शब्द गुणवाचक न होने पर तृतीया विभक्ति में ही रहते हैं। जैसे-

सो धणें/धणेण/धणेणं (3/1) उल्लसइ (वह धन के कारण खुश होता है।)

ख. स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द में तृतीया ही होती है। जैसे -

सो बुद्धीए/बुद्धिए (3/1) छड्डिउ/आदि (वह बुद्धि के कारण छोड़ दिया गया)

3. **भय** अर्थवाली धातुओं के योग में भय का कारण पंचमी में रखा जाता है। जैसे - बालउ (1/1) **सप्पहे/सप्पहु** (5/1) बीहइ/आदि (बालक सर्प से डरता है।)

4. जब कोई अपने को छिपाता है, तो जिससे **छिपना** चाहता है वहाँ पंचमी विभक्ति होती है।

जैसे - सो **गुरुहे/गुरूहे** (5/1) लुक्कइ/आदि (वह गुरु से छिपता है।)

5. **रोकना** अर्थवाली क्रियाओं के योग में पंचमी विभक्ति रहती है। जैसे - गुरु/गुरू (1/1)सिस्स (2/1) **पावहे/पावाहु** (5/1) रोक्कइ/आदि (गुरु शिष्य को पाप से रोकता है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

6. जिससे **विद्या, कला पढ़ी/सीखी जाए,** उसमें पंचमी होती है। जैसे - सो **गुरुहे/गुरूहे** (5/1) गायणकल (2/1) सिक्खइ/ आदि (वह गुरु से गाने की कला सीखता है।)

7. **दुगुच्छ** (घृणा), **विरम** (हटना) और **पमाय** (भूल, असावधानी) तथा इनके **समानार्थक** शब्दों या क्रियाओं के साथ पंचमी होती है। जैसे -

(i) सज्जणु (1/1) **पावहे/पावहु** (5/1) दुगुच्छइ/आदि (सज्जन पाप से घृणा करता है।)

(ii) मुक्खु (1/1) **अज्झयणहे/अज्झयणहु** (5/1) विरमइ/ आदि (मूर्ख अध्ययन से हटता है।)

(iii) तुहुं (1/1) **सज्झायहे/सज्झायाहु** (5/1) पमायहि/आदि (तुम स्वाध्याय से प्रमाद करते हो।)

8. **उप्पज्ज** (उत्पन्न होना), **पभव** (उत्पन्न होना) क्रिया के योग में पंचमी विभक्ति होती है। जैसे- (i) **खेत्तहे/खेत्तहु** (5/1) धन्नु (1/1) उप्पज्जइ/आदि (खेत से धान उत्पन्न होता है।)

(ii) **लोभहे/लोभाहु** (5/1) कुज्झ (1/1) पभवइ/आदि (लोभ से क्रोध उत्पन्न होता है।)

9. **ज़िससे** किसी वस्तु या व्यक्ति की **तुलना** की जाए, उसमें पंचमी होती है। जैसें -

(i) **धणहे/धणाहु** (5/1) णाणु (1/1) गुरुत्तर (वि. 1/1) अत्थि। (धन से ज्ञान अच्छा है।)

(ii) **नरिंदहे/नरिंदहु** (5/1) मंती/मंति (1/1) कुसलतरो (वि. 1/1) अत्थि। (राजा से मंत्री अधिक कुशल है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

10. **पंचमी** के स्थान में कभी-कभी कहीं-कहीं **तृतीया** और **सप्तमी** पाई जाती है। जैसे -

(i) सो (1/1) **चोरें/चोरेणं** (3/1) बीहइ/आदि (वह चोर से डरता है।)

(पंचमी के स्थान पर तृतीया)।

(ii) तुहुं (1/1) **सज्झायि/सज्झाये** (7/1) पमायहि/आदि (तुम स्वाध्याय में प्रमाद करते हो।)

(पंचमी के स्थान में सप्तमी)।

11. **'विणा'** के योग में पंचमी भी होती है। (**द्वितीया** और **तृतीया** विभक्ति के अतिरिक्त) जैसे-

(i) **रामहे/रामहु** (5/1) विणा सीया/सीय (1/1) ण सोहइ/आदि (राम के बिना सीता नहीं शोभती है।)

(ii) **रामें/रामेणं** (3/1) वा रामु (2/1)विणा सीया/सीय (1/1) ण सोहइ/आदि (राम के बिना सीता नहीं शोभती है।)

अभ्यास

1. पहाड़ से नदी निकलती है। 2. पत्ते से बूँदें गिरती हैं। 3. वह गम्भीरता के कारण प्रसिद्ध है। 4. चोर राजा से डरता है। 5. वह पिता से छिपता है। 6. वह पाप से बचता है। 7. तुम गुरु से पुस्तक पढ़ो। 8. राजा असत्य से घृणा करता है। 9. मूर्ख सज्जनों से हटता है। 10. वह स्वाध्याय में प्रमाद करता है। 11. क्रोध से मोह उत्पन्न होता है। 12. हिंसा से अहिंसा श्रेष्ठ है। 13. वह ज्ञान-गुण से रहित है। 14. वह भाव से विरक्त होता है। 15. धर्म के बिना जीवन व्यर्थ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

षष्ठी विभक्ति - सम्बन्ध

यह बताया जा चुका है कि सम्बन्ध या षष्ठी विभक्ति कारक नहीं है। संबंध में षष्ठी विभक्ति होती है। उसका क्रिया से सम्बन्ध नहीं होता है। प्रथमा, द्वितीया आदि विभक्तियों का क्रिया से संबंध होता है।

1. **हेउ** (प्रयोजन या कारण अर्थ में) शब्द के साथ षष्ठी होती है। **हेउ** शब्द तथा **कारण** या **प्रयोजनवाची** शब्द दोनों को ही षष्ठी विभक्ति में रखा जाता है। जैसे -

   (i) सो **अन्नस्सु/अन्नहो/अन्नसु** (6/1) **हेउ/हेऊ** (6/1) गामि/गामे (7/1) वसइ (वह अन्न के प्रयोजन से गाँव में रहता है।) (यहाँ रहने का हेतु या प्रयोजन अन्न है।)

   (ii) **अज्झयणस्सु/अज्झयणहो** (6/1) **हेउ/हेऊ** (6/1) सिस्सु (1/1) नयरे (7/1) आगच्छइ (अध्ययन के प्रयोजन से शिष्य नगर में आता है।) (यहाँ नगर में आने का प्रयोजन अध्ययन है।)

2. यदि **हेउ** शब्द के साथ **सर्वनाम** का प्रयोग किया गया हो तो **हेउ** शब्द और **सर्वनाम** दोनों में विकल्प से तृतीया, पंचमी या षष्ठी विभक्ति होती है। जैसे - सो **कें हेउणं** (3/1) वा **कहां हेउहे** (5/1) वा **कस्सु हेऊ** (6/1) अत्थ वसइ (वह किस कारण से यहाँ रहता है।)

3. एक समुदाय में से जब एक वस्तु विशिष्टता के आधार से छाँटी जाती है, तब जिसमें से छाँटी जाती है उसमें षष्ठी या सप्तमी होती है। जैसे - **पुप्फेहिं** (7/2) **पुप्फहं** (6/2) वा कमलु (1/1) अईव सोहइ (फूलों में कमल का फूल अत्यन्त शोभता है।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

4. **आशीर्वाद** देने की इच्छा होने पर **आउस, भद्द, कुसल, सुख, हित** तथा इनके **पर्यायवाची** शब्दों के साथ चतुर्थी या षष्ठी होती है। जैसे - **रामाहो/ रामस्सु** (4/1 या 6/1) वा आउस, भद्द, कुसल, हित, सुख (1/1) (राम चिरंजीवी हो, राम का कल्याण हो, राम को सुख हो, राम कुशल हो, राम का हित हो, आदि।)

5. **द्वितीया-तृतीया** आदि विभक्ति के स्थान पर **षष्ठी** होती है। जैसे-

(i) हउं (1/1) **सीमंधरस्सु** (6/1) वन्दउं/वन्दामि (मैं सीमंधर को वन्दना करता हूँ।) (द्वितीया के स्थान पर षष्ठी)।

(ii) **धणस्सु** (6/1) सो (1/1) लद्ध/आदि (धन से वह प्राप्त किया गया।) (तृतीया के स्थान पर षष्ठी)

(iii) सो **चोरस्सु** (6/1) बीहइ (वह चोर से डरता है।) (पंचमी के स्थान पर षष्ठी)

(iv) ताहे **पिट्ठीहे** (6/1) केस-भारु (1/1) (उसकी पीठ पर केशभार है।) (सप्तमी के स्थान पर षष्ठी)।

6. **(खेदपूर्वक) स्मरण करना, दया करना**, अर्थ वाली क्रिया के साथ कर्म में षष्ठी होती है। जैसे-

(i) सो **मायाहे/मायहे** (6/1) समरइ (वह माता का स्मरण करता है।)

(ii) सो **बालअस्सु** (6/1) दयइ/आदि (वह बालक पर दया करता है।)

साधारण अर्थ में स्मरण करने के कर्म में द्वितीया ही होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभ्यास

1. राम अध्ययन के प्रयोजन से ग्रन्थ पढ़ता है। 2. वह किस कारण से आया है। 3. पर्वतों में मेरु अत्यन्त ऊँचा है। 4. पुत्री का कल्याण हो। 5. मैं महावीर की वंदना करता हूँ। 6. वह धन से धनवान हुआ। 7. वह शेर से डरता है। 8. उसके मकान पर पत्थर है।

सप्तमी विभक्ति - अधिकरण कारक

1. 'कर्त्ता की क्रिया का आधार या कर्म का आधार **अधिकरण** कारक होता है।' दूसरे अर्थ में 'जिस स्थान पर कोई होता है, उसे अधिकरण कहते हैं और वह सप्तमी विभक्ति में रखा जाता है।' जैसे -

   (i) सो **आसनि/आसने** (7/1) चिट्ठइ/आदि (वह आसन पर बैठता है।) यहाँ कर्ता 'सो' (वह) की क्रिया चिट्ठइ (बैठना) का आधार आसन है अत: उसमें सप्तमी विभक्ति हुई।

   (ii) सो **थालीहिं/थालिहिं** (7/1) ओदण (2/1) पचइ/आदि (वह थाली (हाँडी) में भात पकाता है।) यहाँ ओदण का आधार थाली (हाँडी) है अत: उसमें सप्तमी विभक्ति हुई।

   दूसरे शब्दों में बैठने का कार्य आसन पर और पकाने का कार्य थाली (हाँडी) में होने के कारण इनमें अधिकरण कारक हुआ। अत: सप्तमी में रखा गया है।

2. जब एक कार्य के हो जाने पर दूसरा कार्य होता है तो **हो चुके कार्य** में **सप्तमी** का प्रयोग होता है। हो चुके कार्य के वाक्य में **सकर्मक क्रिया** का प्रयोग होने पर वाक्य **कर्मवाच्य** में होगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और **अकर्मक क्रिया** का प्रयोग होने पर वाक्य **कर्तृवाच्य** में होगा। जैसे –

1) सकर्मक क्रिया का प्रयोग :

(i) तइं/पइं (3/1) **भोयणे** (7/1) **खाए** (भूकृ 7/1) सो हरिसइ (तुम्हारे भोजन खा लेने पर वह प्रसन्न होता है।) (कर्मवाच्य)।

(ii) तें/तेणं (3/1) **गंथे** (7/1) **पढिए** (7/1) तुहुं गाअहि/आदि (उसके ग्रंथ पढ़ लेने पर तुम गाते हो) (कर्मवाच्य)

यहाँ कर्त्ता में तृतीया, कर्म और कृदन्त में सप्तमी का प्रयोग हुआ है।

2) अकर्मक क्रिया का प्रयोग :

(i) **सूरे** (7/1) **उग्गिए** (7/1) कमलु (1/1) विअसइ (सूर्य के उगने पर कमल खिलता है।) (कर्तृवाच्य)।

कर्तृवाच्य में कर्त्ता और कृदन्त में सप्तमी होती है। और कर्मवाच्य में कर्त्ता में तृतीया और कर्म और कृदन्त में सप्तमी होती है।

3) जाना क्रिया दोनों प्रकार से प्रयुक्त हो सकती है। जैसा कि ऊपर उदाहरण में बताया गया है। जैसे –

(i) **रामे** (7/1) वनु (2/1) **गए** (7/1) दसरहु (1/1) पाणा (2/2) चुअइ/चयइ (राम के वन को गए हुए होने पर दशरथ प्राणों को त्यागता है) (कर्तृवाच्य)

(ii) रामें/रामेण (3/1) **वने** (7/1) **गए** (7/1) दसरहु (1/1) पाणा (2/2) चुअइ/चयइ (राम के वन को गए हुए होने पर दशरथ प्राणों को त्यागता है) (कर्मवाच्य)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अतः कर्मवाच्य में कर्त्ता में तृतीया और कर्म और कृदन्त में सप्तमी होती है। कर्तृवाच्य में कर्त्ता और कृदन्त में सप्तमी होती है।

3. **द्वितीया** और **तृतीया** विभक्ति के स्थान में **सप्तमी** भी हो जाती है। जैसे –

(i) हउं **नयरि/नयरे** (7/1) न जाउं/आदि (मैं नगर को > में नहीं जाता हूँ।) (द्वितीया के स्थान पर सप्तमी)

(ii) **तहिं तीसु** (7/2) पुहइ/पुहई (1/1) अलंकिआ/आदि (उन तीनों के द्वारा पृथ्वी अलंकृत हुई।) (तृतीया के स्थान पर सप्तमी)

4. **पंचमी** के स्थान पर कभी-कभी **सप्तमी** पाई जाती है। जैसे – **अन्तेउरि/अन्तेउरे** (7/1) रमिउ (संकृ) राया (1/1) आगउ/ आदि (अन्तःपुर से रमण करके राजा आ गया।) (यहाँ पंचमी के स्थान पर सप्तमी हुई।)

5. **फेंकने** अर्थ की क्रियाओं के साथ सप्तमी होती है। जैसे – सो बालु (2/1) **जले/जलि** (7/1)खिवइ (वह बालक को जल में फेंकता है।)

अभ्यास

1. राजा आसन पर बैठा। 2. वह घर में रहता है। 3. क्रोध के शान्त होने पर दया होती है। 4. कुशील के नष्ट होने पर शील प्रकट होता है। 5. आगमों को जानकर तुम्हारे लिए सत्य कहा गया है। 6. अनुचरों के साथ बातचीत करके वह गया। 7. विषय से उदासीन चित्त योगी होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org